THE TIMES OF INDIA

Date: 28-06-17

Welcome to India

India needs to take the idea of tourist police seriously

TOI Editorials

India has an inherent advantage as a tourist destination. Both history and geography makes it attractive to travellers. If these inherent advantages haven't been adequately leveraged to generate more economic activity, part of the blame belongs to its poor governance record, particularly in the area of policing and security for tourists. In this context, a government run institute on tourism has recommended the creation of a specialised police force for protection of tourists to enhance India's appeal. This is a sensible suggestion and must be taken up by the government.

The government claims that as many as 13 states in India have deployed tourist police in one form or another. However, this hasn't translated into visible improvement in security for tourists. High recorded incidence of crime against tourists in Delhi, an important transit hub for tourists, is a case in point. Other than India's generally deficient tourist infrastructure and archaic laws, this too is an obstacle to ramping up tourism. Failure here will hurt employment creation when jobs created by tourism were expected to almost double to 13 million in the decade between 2013 and 2022.

Tourism needs policy attention precisely for this reason. Opportunities that are lost become apparent when the 8.89 million visitors received by continent-sized India in 2016 are juxtaposed with the 16.4 million received by city-sized Singapore. It is time to take a leaf out of Singapore's playbook and provide India's tourist police with specialised training geared towards producing better experiences for tourists. This should be complemented with Ireland's approach where the state makes itself a party to criminal proceedings in case of crime against tourists. This will insulate tourists from India's creakingly slow judicial system and encourage them to come in larger numbers.

दैनिक भास्कर

Date: 28-06-17

जब शिक्षा नीति के नतीजे आने थे तब समिति बनी है

संपादकीय

मोदी सरकारको सत्ता में आए तीन साल होने को आए लेकिन, शिक्षा नीति का कहीं अता-पता नहीं है, जबकि 2014 के चुनाव अभियान में शिक्षा में आमूल बदलाव का वादा भी प्रमुख था। अब ख्यात वैज्ञानिक कृष्णास्वामी कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में नौ सदस्यीय समिति गठित की गई है, जिसे कोई समय-सीमा तो नहीं दी गई है लेकिन, समझा जाता है कि वह छह-सात महीने में अपनी रिपोर्ट देगी। उसके बाद कब इसे लागू किया जाएगा और उसके परिणाम कब दिखाई देंगे, कुछ कहा नहीं जा सकता। सही तो यह होता कि 2015 में पूर्व कैबिनेट सचिव टीएसआर सुब्रमनियन की अध्यक्षता में बनाई समिति को सही ढंग से काम करने दिया जाता और शिक्षा नीति 2016 में लागू हो जाती तो सरकार कुछ करके दिखा सकती थी। बताते हैं कि उस समिति के कुछ सदस्यों की तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री स्मृति ईरानी से पटरी नहीं बैठी।

उस समिति ने अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवाओं की तर्ज पर शिक्षा के लिए कैडर बनाने, यूजीसी को खत्म करने, पांचवीं तक परीक्षा लेने और प्राइमरी से अंग्रेजी पढ़ाने जैसे सुझाव दिए थे। अब कस्तूरीरंगन समिति से कहा गया है कि वह भारतीय शिक्षा को समकालीन स्वरूप दें और उसकी गुणवत्ता सुधारने के साथ उसे अंतरराष्ट्रीय बनाएं। सीधी-सी बात है कि कुल-मिलाकर शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने का मामला है और यह शिक्षकों के माध्यम से ही संभव है। अच्छी शिक्षा व्यवस्था के लिए योग्य शिक्षकों की नियुक्ति सबसे बड़ी चुनौती है। हमारे देश में ज्ञान, बुद्धमत्ता और प्रतिबद्धता के कारण शिक्षकों का बड़ा सम्मान था लेकिन, पिछले कुछ दशकों में शिक्षक वह सम्मान गंवा बैठे हैं।

इसलिए सबसे बड़ी चुनौती शिक्षक की प्रतिष्ठा बहाल करने की है। उनकी प्रतिष्ठा तब बहाल होगी जब वे अपने दायित्व की कसौटी पर खरे उतरें। इसके लिए बदलते समय के अनुरूप प्रशिक्षण की जरूरत है। स्कूलों में योग्य प्रशासन के लिए हैडमास्टर अथवा प्रिंसिपल होना जरूरी है। अभी तो यह हालत है कि सरकारी स्कूलों में शिक्षकों में से ही कोई हैडमास्टर की भूमिका निभा लेता है। हमें यह भी समझना होगा कि किसी दफ्तर में कागजों फाइलों में काम करने वाले कर्मचारी से शिक्षक के काम की तुलना नहीं की जा सकती। वह जीते-जागते बच्चों को गढ़ते हैं, जो बहुत श्रमसाध्य और धीरज से किया जाने वाला काम है। ऐसे में कुशल शिक्षक पर ही नई नीति का फोकस होना चाहिए।

THE ECONOMIC TIMES

Date: 28-06-17

Will badminton become the new cricket in India?

ET Editorials

While the faces of Virat Kohli and Co stare at us from billboards and television screens, endorsing everything from cars to deodorants, Indians will be hard-pressed to see players of any other sport as public heroes. That could change soon.The country is slowly becoming a global power in badminton. Within the space of one week in June, Guntur-based Kidambi Srikanth beat the world's top players to win the men's singles titles in Indonesia and Australia Super Series tournaments.Earlier, his teammate Sai Praneeth wrested the Singapore Super Series, beating Srikanth in the finals. Three men's shuttlers rank among the top 20 in the world. Japan, South Korea, Indonesia, Thailand and Denmark now find another serious competitor in India.Our previous triumphs in this sport date back to Prakash Padukone and Pullela Gopichand winning the All England Open in 1980 and 2001, respectively. India's women players actually started this new winning streak.Saina Nehwal won an Olympic bronze in 2012; P V Sindhu bagged a silver in 2016. Much of the credit goes to Gopichand, who insists on the most modern and demanding training to maximise speed, agility and endurance in his academy. It is rare to find a coach with his discipline, doggedness and eye for talent. Now, hockey, wrestling, women's boxing, gymnastics and so on, where Indians show occasional sparks of brilliance, only to fade quickly, must be administered and supported by professionals, institutions and sponsors.India's 1983 World Cup cricket victory in England, its first, galvanised a nation. Sponsorships and other income is huge, training is top notch. With its current performances, badminton should get that sort of eyeballs and funding. This could be the beginning of a smash hit for Indian badminton

---

जनसत्ता

Date: 28-06-17

अमेरिका में मोदी

संपादकीय

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की इस अमेरिका यात्रा की अहमियत जाहिर है। डोनाल्ड ट्रंप के राष्ट्रपति बनने के बाद यह अमेरिका का उनका पहला सफर है। अलबत्ता नवंबर से टेलीफोन पर दोनों नेताओं की तीन बार बात हो चुकी है। ट्रंप के साथ वाइट हाउस में मोदी की होने वाली मुलाकात से पहले दो-तीन घटनाओं ने यही जताया कि संबंधों को और प्रगाढ़ करने की ललक दोनों तरफ है। मोदी दो मौकों पर अपनी बात रख चुके हैं। एक, अमेरिका में रह रहे भारतवंशियों के सामने, और दो, दुनिया भर में कारोबार करने वाली अमेरिका की कुछ कंपनियों के दिग्गजों के सामने। अमेरिका निवासी भारतवंशी समद्धिशाली तो हैं ही, उनमें से कई लोग वहां बहुत ऊंचे पदों पर विराजमान हैं और नीति-निर्धारण में अहम भूमिका निभा रहे हैं। उन्हें संबोधित करते हुए मोदी ने जो कुछ कहा उसके पीछे इरादा बस भावनात्मक रिश्ते की याद

दिलाना भर नहीं था, बल्कि भारत के हक में अमेरिकी नीतियों को प्रभावित करने के लिए उनका सहयोग पाने की मंशा भी रही होगी। भारत-अमेरिका परमाणु करार के सिलसिले में ऐसा हुआ भी था।अमेरिका के कारोबारी दिग्गजों को संबोधित करते हुए मोदी ने भरोसा दिलाना चाहा कि भारत आर्थिक सुधारों की राह पर चल रहा है और भारत में निवेश करना तथा व्यापार करना पहले से कहीं आसान हो गया है, इसलिए भारत में पूंजी लगाने में वे तनिक न हिचकें। आर्थिक सुधारों की दिशा में अपनी सरकार के नए व बड़े कदम के रूप में उन्होंने वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी की चर्चा की। इसी के साथ उन्होंने भारत-अमेरिका का व्यापार कुछ ही बरसों में कई गुना बढ़ जाने की उम्मीद जताई। लेकिन हकीकत के धरातल पर देखें तो कहां खड़े हैं! नोटबंदी के बाद आर्थिक वृद्धि दर में आई कमी से दुनिया वाकिफ है। रेटिंग एजेंसियों ने भारत सरकार के बार-बार अनुरोध के बावजूद दर्जा नहीं बढ़ाया। कारोबार में होने वाली आसानी के दावे के बरक्स अमेरिकी कारोबारियों ने निवेश व व्यापार में आने वाली दिक्कतें दूर करने का अनुरोध किया। विडंबना यह है कि अमेरिका कहीं ज्यादा संरक्षणवाद के रास्ते पर चल रहा है। इसके चलते भारत का आइटी उद्योग बुरी तरह प्रभावित हो रहा है, जिसकी कमाई का साठ फीसद अमेरिकी स्रोत से आता है। यही कारण है कि एच-1 बी वीजा भारत के लिए एक बड़ा मुद्दा बन गया है और उम्मीद है कि ट्रंप से होने वाली बातचीत में मोदी इसे जोर देकर उठाएंगे।

ट्रंप और मोदी की मुलाकात ऐसे वक्त होने जा रही है जब पेरिस जलवायु समझौते पर दोनों नेताओं के तीखे मतभेद सामने आ चुके हैं। ट्रंप ने जहां अमेरिका को जलवायु करार से अलग कर लिया है, वहीं भारत ने इस करार के प्रति अपनी प्रतिबद्धता फिर दोहराई है। यों अफगानिस्तान में सुरक्षा संबंधी चुनौतियों से लेकर खाड़ी क्षेत्र, समुद्री आवागमन और सुरक्षा तथा आतंकवाद से लेकर आपसी व्यापार तक अनेक मसलों पर चर्चा होगी। पर सबसे ज्यादा समान रुख, जाहिर है, आतंकवाद पर होगा। संभव है, ट्रंप पाकिस्तान के प्रति सख्ती का भी संकेत दें। पर अमेरिका की दिलचस्पी सबसे ज्यादा जिस चीज में है वह है रक्षा सहयोग, जिसमें अमेरिका विक्रेता की भूमिका में होगा और भारत खरीदार के रूप में। मोदी ने कहा है कि अमेरिका से रणनीतिक संबंध का तर्क अकाट्य है। पर सवाल है कि इसे किस संदर्भ में और किस कसौटी पर परिभाषित किया जाएगा!

Date: 28-06-17

किदांबी का करिश्मा

संपादकीय

आस्टेलिया की राजधानी सिडनी में रविवार को भारतीय शटलर किदांबी श्रीकांत ने आस्ट्रेलियाई ओपन खिताब में ओलंपिक और विश्व चैंपियन चीनी खिलाड़ी चेन लोंग को हरा कर चौथा सुपर सीरीज खिताब अपने नाम कर लिया। इस जीत के साथ ही चौबीस साल के इस खिलाड़ी ने एक नया इतिहास रचा है। यह जीत कई तरह से भारत के लिए काफी महत्त्वपूर्ण है। श्रीकांत जहां दुनिया में ग्यारहवें नंबर के खिलाड़ी माने जाते हैं, वहीं चेन लोंग छठे नंबर के। लोंग बैडमिंटन का आॅल इंग्लैंड चैंपियन का खिताब भी पिछले दिनों जीत चुके हैं। इसलिए जब श्रीकांत ने लोंग को पैंतालीस मिनट के खेल में 22-20 और 21-16 से शिकस्त दी तो खेल विशेषज्ञ और दर्शक चकित थे। किदांबी श्रीकांत अब दुनिया के पांचवें नंबर के खिलाड़ी बन गए हैं।इससे पहले दोनों के बीच पांच मुकाबले हो चुके हैं, जिनमें श्रीकांत नाकाम रहे थे। मगर इस बार श्रीकांत ने यह 'चीनी दीवार' लांघ दी। गौरतलब है कि पिछले हफ्ते उन्होंने इंडोनेशिया ओपन सुपर सीरीज प्रीमियर में भी खिताब जीता था। श्रीकांत ने अपनी जीत पर संतुलित और विनम्र प्रतिक्रिया दी है, जो सचमुच किसी श्रेष्ठ खिलाड़ी का लक्षण है। उन्होंने कहा,

'मैं शारीरिक रूप से अच्छी हालत में नहीं था। फिर भी, मैं जीत या हार के बारे में नहीं सोच रहा था। मैं सिर्फ मैच का लुत्फ उठाना चाहता था। लेकिन चेन लोंग से जीतना मेरे लिए बड़ी उपलब्धि है।' दरअसल, इस भिड़ंत में श्रीकांत ने अपने प्रतिद्वंद्वी के मुकाबले ज्यादा समझ-बूझ से काम लिया। जैसा कि श्रीकांत ने कहा भी कि उनके कोच ने उन्हें धीरज के साथ और आहिस्ता-आहिस्ता आगे बढ़ने की सलाह दी थी, क्योंकि चीनी खिलाड़ी चेन लोंग आक्रामक थे। उन्होंने कई सटीक बेसलाइन स्ट्रोक भी जमाए, लेकिन श्रीकांत ने भी बेहतरीन स्मैश जमाए। श्रीकांत ने शुरू में ही 17-15 की बढ़त ले ली थी। लोंग के अस्थिर खेल ने श्रीकांत को सहारा दिया।

सधी हुई लय ने श्रीकांत को आखिरकार विजयमाला पहना ही दी। इस जीत ने भारत के पुरुष बैडमिंटन को नया आयाम दिया है। यह इशारा है कि प्रकाश पादुकोण और विमल कुमार के बाद एक बार फिर बैडमिंटन में भारतीय पुरुषों का दबदबा बढ़ रहा है। श्रीकांत का लगातार तीन सुपर सीरीज में जीत का मतलब है कि पुरुष खिलाड़ी भी बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं। हाल के दिनों में बैडमिंटन में महिला खिलाड़ियों का पलड़ा भारी रहा है। लंदन ओलंपिक में साइना नेहवाल ने विश्वमंच पर अपना झंडा गाड़ दिया था। रियो ओलंपिक में पीवी सिंधू ने रजत पदक जीत कर बताया था कि भारतीय महिला बैडमिंटन का भविष्य उज्ज्वल है। अब हैदराबाद के एक किसान के बेटे श्रीकांत ने भी अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया है। लगातार दो सुपर सीरीज जीतने वाले वे पहले भारतीय पुरुष शटलर हैं। मशहूर क्रिकेट खिलाड़ी सचिन तेंदुलकर ने कहा है, 'तुम पर गर्व है चैंपियन।' भारतीय बैडमिंटन संघ (बाई) ने श्रीकांत को इस जीत के लिए पांच लाख रुपए का पुरस्कार देने की घोषणा की है। बाई अध्यक्ष ने कहा है कि श्रीकांत की उपलब्धि गर्व करने योग्य है। यह अफसोस की बात है कि कई खेलों में नई-नई भारतीय प्रतिभाएं अपनी सफलता के झंडे गाड़ रही हैं, पर देश का सारा ध्यान क्रिकेट तक सीमित होकर रह जाता है।

दैनिक जागरण

Date: 28-06-17

प्रशासन यानी विचारों की अकाल मौत

आर विक्रम सिंह

लक्ष्य विहीनता एक प्रमुख प्रशासनिक समस्या है। अब वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुना करने का लक्ष्य नियत किया गया है। यह एक आर्थिक लक्ष्य है। जाहिर है कि कृषि, ग्रामीण विकास, पशुपालन, कृषि भंडारण, सहकारिता, कृषि व्यापार, सिंचाई आदि से संबंधित विभागों में बेहतर सामंजस्य की आवश्यकता होगी। लेकिन विडंबना यह है कि हमारी प्रशासनिक व्यवस्थाएं लक्ष्यों का उस तरह से पीछा नहीं करतीं, जैसा कि कॉरपोरेट दुनिया में चलन है। इसके लिए आवश्यक यह है कि प्रत्येक प्रदेश में संबंधित विभागीय मंत्रियों की समिति का गठन हो एवं वरिष्ठतम मंत्री के मार्गदर्शन में एक समेकित योजना पर कार्य प्रारंभ कर दिया जाए। ग्रामीण विकास का एक विभाग के रूप में न होना एवं विभिन्न विभागों में उसका विभाजित होना इस लक्ष्य की पूर्ति में बड़ी बाधा है। अगर उपरोक्त विभाग ग्रामीण विकास के छत्र के नीचे उप विभाग जैसे होते, तो काम आसान था। पर कमजोर सरकारों के दौर में मंत्रियों की बढ़ती हुई संख्या ने कभी मुख्यमंत्री को मजबूर किया होगा कि एक ही विभाग को अस्वाभाविक रूप से ही सही, खंड-खंड कर टुकड़ों में बांटा जाए। विभागों के बन जाने के बाद उनके विभागीय हित उत्पन्न हो जाते हैं। वैसे में पुनः एकीकरण का कार्य टेढ़ी खीर हो जाता है। परिणामस्वरूप आज कृषकों की आय दोगुना करने के संकल्प को पूर्ण करना एक बड़ी आर्थिक एवं प्रशासनिक चुनौती है।इसी प्रकार का मसला नगर विकास और आवास का भी है। क्या नगर विकास और नगरीय आवास को अलग करके देखा जा सकता है? नगर निगम में कार्यकाल के दौरान यह अस्वाभाविकता स्पष्ट रूप से सामने आई। नगर निगमों में तो

कर्मचारियों के लिए प्रायः वेतन की व्यवस्था भी मुश्किल से हो पाती थी, जबकि विकास प्राधिकरणों में उसी नगर से वसूल किए गए विकास शुल्क की सैकड़ों करोड़ रुपये की धनराशि फिक्स डिपोजिट में जमा रहती है। एक ओर तो नगर निगमों के मुख्य संसाधनों को उनसे काटकर विकास के नाम पर प्राधिकरण बनाकर नगर निगमों को अभावग्रस्त छोड़ दिया गया, दूसरी ओर विकास प्राधिकरण बगैर जवाबदेही वाली संस्था बन गए। फिर अनियमित अवैध निर्माणों पर कोई सवाल पूछने वाला भी न रहा। विरोधाभास का दूसरा उदाहरण यह कि नगरों में संपत्तियों के क्रय-विक्रय से प्राप्त होने वाले स्टैम्प शुल्क का मात्र डेढ़ प्रतिशत हिस्सा ही नगरों को प्राप्त होता है। अब संपत्ति नगर की, विक्रेता-क्रेता नगर के, और नगर की आय मात्र डेढ़ प्रतिशत? यह मजाक नहीं, तो और क्या है?

एक अन्य मुद्दा, शांति व्यवस्था या लॉ ऐंड ऑर्डर हमारे प्रदेशों की भीषण समस्या है। गृह विभाग 38 अनुभागों का भारी-भरकम विभाग है। जब मैं गृह विभाग में पहुंचा, तो लंका में विचरण कर रहे हनुमान जी के समान मैं भी बहुत आश्चर्यचकित हुआ। शांति व्यवस्था जो मुख्य दायित्व है, उसका कार्य भांति-भांति के अधिकारियों एवं बहुत से अनुभागों में बंटा हुआ है। मुझे महसूस हुआ कि यदि शांति व्यवस्था से जुड़े समस्त अनुभाग अन्य दायित्वों से मुक्त होकर मात्र इसी एक दायित्व का निर्वहन करते, तो बेहतर होता। गृह विभाग में सचिव, शांति व्यवस्था जैसा कोई पद नहीं है। ऐसे किसी पद के बारे में अभी तक सोचा भी नहीं गया है। विभागीय पुनर्गठन के मेरे प्रस्ताव पर यह सहमति बनी कि समस्त अधिकारियों की बैठक बुलाकर पहले इस पर चर्चा की जाए। 'मक्षिका स्थाने मक्षिका' की नीति पर संचालित विभाग प्रायः किसी भी परिवर्तन के घोर विरोधी होते हैं। पर दूसरे दिन प्रमुख सचिव, गृह का स्थानांतरण हो गया।

इस तरह बात वहीं खत्म हो गई और मेरा प्रस्ताव मेरे पेनड्राइव में ही रह गया।हमारे प्रशासन में ऐसा कोई फोरम नहीं है, जहां नए प्रस्तावों, विचारों को रखा जा सके। इसलिए विचारों को अकाल मौत मरते देखा गया है। विकास प्राधिकरण में तैनाती के दौरान देखा गया कि अवैध निर्माण एक बड़ी समस्या है। नोटिसें जारी होती थीं, अवैध निर्माण चलते भी रहते थे। ऐसे में यह व्यवस्था की गई कि अवैध निर्माण की फोटो सहित नोटिस जारी की जाए। फोटो छपी नोटिसों के जारी होते ही जैसे भूकंप आ गया। उस प्राधिकरण में अक्सर राजनीतिक रसूख वाले नेताओं के पति अथवा पत्नियां, अफसर होते थे। फोटो की नोटिसों से अवैध निर्माणकर्ताओं से ज्यादा परेशान तो विभागीय अधिकारी हो गए, क्योंकि फोटो स्वयं में ही प्रमाण थी कि नोटिस के वक्त क्या निर्माण था और अब बढ़कर कितना हो गया है।

शोर यहां तक मचा कि हम लोग लखनऊ बुलाकर फटकारे गए। फोटो नोटिस का सिलसिला बंद हुआ, तो जैसे सबकी जान में जान आई।हमारे विभाग प्रायः उन दायित्वों के विपरीत कार्य करते हैं, जिनके लिए वे बने हैं। प्रत्येक स्तर पर नियमित समीक्षाएं जरूरी हैं, जिससे यह पता चल सके कि क्या विभाग अपने दायित्वों की पूर्ति कर पा रहा है। बाजार में बिकती बच्चों की पंजीरी और पंजीरी खाकर मोटी हुई प्रधान की बछिया तो अब लोकगीतों में भी आ चुकी हैं। खनन, खाद्यान्न घोटाले विभागीय दुरभिसंधि के ही तो उदाहरण हैं। अगर ग्राम पंचायत अधिकारी का बेटा या पत्नी पंचायत अध्यक्ष हो जाए, तो राजनीति और स्थानीय प्रशासन के इस गठजोड़ से कैसे निपटा जाएगा? इस तरह के बहुत से प्रश्न सामने आते हैं। कर्मचारी हित और जनहित प्रायः हमें विपरीत ध्रुवों पर खड़े मिलते हैं। लक्ष्यों का निर्धारण एवं उनका संधान एक गंभीर विषय है। इसलिए प्रशासनिक बेहतरी के रास्ते लगातार खोजना आवश्यक है।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 27-06-17

Not for the children

Our educational system seems tailored for its administrators. Students, teachers take second place. The main problem, as in other fields, is the abysmal quality of governance, with politics permeating every aspect of educational administration

T S R Subramanian The writer is a former Cabinet Secretary

In December last year, the PEW Research Centre in New York, a think-tank focusing on public issues released a research study, with findings of a comparison of schooling standards in over 90 countries. The study, 'Region and Education Around the World' , focuses on "educational attainment" among the major religions of the world. Its startling conclusion is that Hindus have the "lowest" level of "educational attainment" in the world, and the Indian school educational system is at the bottom of the international league, along with that in Sub-Saharan Africa. The study uses parameters prescribed by the UNESCO for assessing schooling standards, and number of years of schooling as the proxy for education accomplishment, not taking into account the quality of education on offer. The "Christian" average is 9.3 years of schooling, 7.9 years for "Buddhists", while Muslims and Hindus of the world undergo 5.6 years of schooling against the global average of 7.7 years.The findings of a 2011 study by R.J. Barro of Harvard University and J.W. Lee of Korea University are in conformity with the PEW assessment of Indian school standards. Some years ago, PISA, the measurement standard adopted in Europe and utilised in a large number of countries, studied Indian school quality in two states. The depressing conclusion of the 110-country study was that India ranked second last — beating only Kyrgyzstan in the honours list. Apparently, it is easy to shoot the messenger than accept bad news — India pulled out of the PISA study, thereafter. Alas, the Indian authorities have no reach to ban PEW or Harvard.

The bad news does not end there. The Annual Status of Education Report conducted by Pratham, an Indian NGO with some credibility, had assessed in 2014 that 75 per cent of all children in Class III, over 50 per cent in Class V and over 25 per cent in Class VIII could not read texts meant for Class II. Further, reading levels for all children enrolled in government schools in Class V showed a decline between 2010 and 2012. National Survey Sample results in 2015 indicated sharp decline in learning outcomes in mathematics, science and English in the secondary schools. A recent study in Delhi has come out with the finding that only 54 per cent of the city's children can read something — it could be only a sentence. One will have to be extremely obtuse to not realise that the Indian school education system is in terrible shape — even if it is not the worst in the world.There is ample evidence that the Indian child is as good a learner as any in the world. Indeed, Indian Americans are among the highly educated communities in the US, according to PEW. It is just sheer lack of basic opportunity that has kept the Indian child at very low education standards — a proof of apathy in governance.What ails the system — well, nearly everything. The main problem, as in other fields, is the abysmal quality of governance, with politics permeating every aspect of educational administration. Factors other than merit play a significant part in the management of affairs; proper governance standards, with adequate incentives, and checks and balances, have not been put in place (deliberately?). The focus of the entire structure at the Centre and the states is on the minister, secretary, and the educational regulatory institutions — not on the student, teacher, principal and school.

The system is not “inclusive” and does not give a second chance to the weaker sections. The fundamentals of teacher management, teacher education and training as well as school governance and management are lacking at every step. The curriculum is rote-oriented and little practical thought has been given to pedagogy at any stage. The school-level data are unreliable. The access promised to the Economically Weaker Sections (EWS) has hardly been implemented. The infrastructure promised in the Right to Education Act (RTE) is scarcely visible on the ground. The list can go on — wherever you look, reforms are urgently-required.Don’t the policymakers at the Centre and the states — the politicians, the ministers and the bureaucrats — know the ground realities and the depth of the problem? Indeed a few are aware. Others see their association with the education department as transient — they do not want to know or to learn. It is comforting not to know. Those who know the reality do not want to take any initiative which will disturb the strong vested interests which have permeated every element of the education space. The authorities are quite content to be busy handling the day-to-day operational management crises, or happily exercising their patronage whenever they can. Periodical tit-bits of superficial “reforms”, and headlines attracting media publicity is adequate to give the impression that management of the sector is sound, and that “reforms” are being undertaken. In short there is no urge in the Centre or the states to drastically improve the situation of school education.Indeed, in every public and closed-door education-related meeting, there is no shortage of reference to Saraswati, the goddess of learning, or of pontification on the critical and seminal role played by education in the development of the country. These are pure formalities, with zero intention of converting them to practice. After all, the children have no votes; the parents are not organised and are at the most, able to find fault with the local school, and not go on to the root cause. Who is going to start the transformation of the school sector? No politician or bureaucrat is interested, as it will take at least a decade for results to show.

Major, far reaching, reforms are under way in the economic sector. The present government has commenced important steps to address the black economy and electoral reforms. Only if and when the prime minister starts taking a personal interest will things start moving in the education sector. For India’s medium-term prospects of stability, and for the country to play a rightful role in world affairs, it is imperative that the Centre takes this as a major area for intervention.

राष्ट्रीय सहारा

Date: 27-06-17

त्रि-शक्ति और भारत

रहीस सिंह

इस समय नियंतण्र स्तर पर द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय संबंधों में अनिश्चितता, गैर-संभ्रांतवादी प्रतिस्पर्धा और विरोधाभासों का संयोजन बेहद जटिल रूप में दिख रहा है। ऐसे में नियंतण्र गतिविधियों के फोकल प्वाइंट को पहचानना और निर्णायक शक्तियों के ग्रेट गेम को सीधे तौर पर नहीं समझा जा सकता। सामान्य तौर पर नियंतण्र रणनीति का फोकल प्वाइंट मध्य-पूर्व प्रतीत हो रहा है लेकिन मध्य एशिया, यूरेशिया, एशिया प्रशांत, दक्षिण एशिया अथवा हिंद महासागर में भी इसके छाया बिंदु देखे जा सकते हैं। इस समय अमेरिका ऐसी अनिश्चित विदेश नीति के साथ आगे बढ़ रहा है, जिसके चलते अमेरिकी विचारक अमेरिकी शक्ति को लेकर ‘‘हेडलेस सुपरमैसी’ जैसे शब्द प्रयुक्त करने लगे हैं। चीनी महत्त्वाकांक्षाएं रेनमिनबी को लग रहे झटकों के बाद भी लगातार बढ़ती दिख रही हैं जबकि रूस मध्य-पूर्व के जरिए सोवियत युग में

लौटना चाहता है। प्रश्न उठता है कि भारत बहुविषमीय नियंतण्र संबंधों वाली व्यवस्था में किस प्रकार की भूमिका का चुनाव करेगा? नियंतण्र रणनीतिक सक्रियता एवं कुछ देशों की विस्तारवादी महत्त्वाकांक्षाओं के मध्य भारत अपना स्थान कहां सुनिश्चित करने वाला है? क्या भारत को महाद्वीपीय डोमेन में रहना चाहिए अथवा मैरीटाइम डोमेन में? उस स्वयं को यूरेशियाई ताकत के रूप परिभाषित करना चाहिए अथवा एशिया-प्रशांत के रूप में या फिर सिर्फ दक्षिण एशियाई शक्ति के रूप में? ब्रिक्स, शंघाई सहयोग संगठन, एआईआईबी में सदस्यता हासिल करना और ''वन बेल्ट वन रोड' फोरम से बाहर रहना जबकि ये सभी एक दूसरे के पूरक के रूप में काम कर रहे हैं, क्या भारतीय विदेश नीतिकिय वैचारिकी को प्रदर्शित करता है? भारत की जरूरत अमेरिका से स्वाभाविक दोस्ती कायम करना है या नहीं, रूस के साथ नया गठबंधन (सैनिक-आर्थिक) बनाना है या नहीं, यह देखना उतना जरूरी नहीं है लेकिन यह जानना जरूरी है कि चीन से भारत किस तरह से सतर्क है अथवा बीजिंग-इस्लामाबाद रणनीति को भारत किस तरह से देख रहा है और उसके विरुद्ध किस तरह की रणनीति अपनाने जा रहा है? किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले कुछ बिंदुओं पर गौर करना आवयक होगा। पहला, चीन ने दुनिया भर के केंद्रीय बैंकों के साथ स्वैप की व्यवस्था मजबूत की है। उसने 33 ट्रिलियन यूयान के ऐसे 35 समझौते किए हैं, जिनकी मदद से अमेरिकी डॉलर में लेनदेन को दरकिनार किया जा सकता है। चीन की महत्त्वाकांक्षी वन बेल्ट वन रोड (ओबीओआर) का सबसे अहम पहलू रेनमिनबी का अंतरराष्ट्रीयकरण भी है क्योंकि इसके घोषित लक्ष्यों में से एक है प्रतिभागी देशों के बीच वित्तीय समन्वय। सवाल यह है कि इन मंचों पर भारत अपनी भूमिका का निर्धारण कैसे करेगा? आंतरिक एशियाई परिस्थितियां इस समय नये अनुभव साझा कर रही हैं, जिसमें भारत के लिए अवसर हैं, विकल्प हैं और चुनौतियां भी। भारत के लिए जरूरी हो चुका है कि एशियाई भू-राजनीति पर अपना निर्णायक प्रभाव डाले। लेकिन उसके डिप्लोमैटिक एक्सेस में चीन और पाकिस्तान लगातार बाधा डालने की कोशिश कर रहे हैं, अमेरिका अब संदिग्ध चरित्र के साथ आगे बढ़ा है इसलिए वह चीन-पाकिस्तान को रोकने में भारत की सहायता नहीं कर सका और रूस की भारत के प्रति नीति विास एवं विचलन की विशेषता नजर आ रही है। क्या इसके बावजूद भारत आंतरिक एशिया (इनर एशिया) की वर्तमान भू-सामरिक स्थिति का आकलन कर स्वयं को महाद्वीपीय शक्ति बनने का रास्ता खोज पाएगा (कमोबेश उसी तरह जैसे चीन यहां से होकर महाशक्ति बनने का रास्ता खोज चुका है)? यूरेशियाई संगठन एसएसीओ में पूर्ण सदस्यता के लिए भारत की दावेदारी के पीछे उद्देश्य क्या हैं? एक बहुध्रुवीय विश्व के निर्माण पर फोकस करना अथवा यूरेशियन इकोनॉमिक जोन में अपनी सक्रियता दिखाकर स्वयं को एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में प्रोजेक्ट करना? समग्र आकलन करें तो लगता है कि भारत रूस एवं चीन, ब्रिक्स, शंघाई सहयोग संगठन और एआईआईबी के साथ एक त्रिपक्षीय फोरम में शामिल हो रहा है। लेकिन पिछले महीने जब भारत ने बेल्ट और रोड फोरम में शामिल होने से इनकार किया था, तब से लेकर 8-9 जुलाई, 2017 यानी एससीओ की अस्ताना समिट तक क्या कुछ बदल गया था? एसीसीओ और एआईआईबी तो सही अर्थो में चीनी शक्ति के इमजे्रस का प्रतीक हैं, जो भारत के लिए अमेरिका सहित किसी भी पश्चिमी ताकत की अपेक्षा कहीं अधिक कठिनाइयां पैदा करेगा। भारत के लिए मुख्य चिंता का विषय है पाकिस्तान द्वारा भारत के खिलाफ लड़ा जा रहा छद्म युद्ध। इस मसले पर चीन बातचीत के लिए ही बातचीत करता है क्योंकि वह इस मामले में पाकिस्तान पर कभी भी मौखिक या लिखित रूप से अनचाहा दबाव भी नहीं बनाता। द्वितीय चीन की बेल्ट एंड रोड पहल बीजिंग के आर्थिक, राजनीतिक और सामरिक हितों को बढ़ावा देने के लिए है, लेकिन यह भारतीय की क्षेत्रीय संप्रभुता को प्रभावित करेगी। ध्यान रहे कि चीन पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर (पीओके) से सीपेक को ले जा रहा है, जहां तक भारत की संप्रभुता का विस्तार है जहां से होकर चीन के सिल्क रोड इंडस्ट्रियल बेल्ट का एक हिस्सा जाता है। जिस दिन शी जिनपिंग बीजिंग में वन बेल्ट वन रोड फोरम का उद्घाटन कर रहे थे, नई दिल्ली ने विदेश मंत्रालय की तरफ से आधिकारिक तौर पर चीन-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर (सीपेक) के संदर्भ में स्पष्ट किया था कि कोई भी देश ऐसे प्रोजेक्ट को स्वीकार नहीं कर सकता जो किसी देश की संप्रभुता संबंधी प्रमुख चिंताओं और भू-क्षेत्रीय अखंडता की उपेक्षा करता हो। कुल मिलाकर कम-से-कम एशियाई मंचों पर जो सामरिक, रणनीतिक एवं कूटनीतिक गतिविधियां हमें दिख रही हैं, उनमें भारत के लिए कई संदेश छुपे हुए हैं। इसलिए भारत को विदेश नीति के मोर्चे पर मिल रहीं कुछ सफलताओं को उन विरोधाभासों एवं अवरोधों के सापेक्ष आकलित करने की जरूरत है, जो भारत की तरफ से दुनिया को सीधा-सपाट संदेश देने और महाद्वीपीय ताकत बनने में अक्षम बना रहे हैं।